



A CRITICAL STUDY OF WOMEN'S PROPERTY RIGHTS UNDER HINDU LAW

हिंदू विधि के अंतर्गत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों का एक आलोचनात्मक अध्ययन

Nazia Bano

Roll Number: 240901162008

Course: LL.M

Amrit Law College, Dhanauri, Roorkee

सार

दुनिया भर में महिलाओं की स्थिति आम तौर पर पुरुषों से कमतर रही है और इस संबंध में भारत अपवाद नहीं है। स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की स्थिति में सुधार के आंदोलन ने गति पकड़ी और कई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों ने इसके सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 ने पहली बार हिंदू विधवा को 'हिंदू महिला संपत्ति' के रूप में सीमित हित के रूप में उत्तराधिकार का अधिकार प्रदान किया। पुराने हिंदू कानून के तहत केवल 'स्ट्रिधान' ही विधवा की पूर्ण संपत्ति थी और उसके संबंध में स्वामित्व, कब्जे और अलगाव के अनन्य और असीमित अधिकार थे। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 हिंदू महिलाओं को संपत्ति के अधिकार प्रदान करने वाला स्वतंत्रता के बाद का पहला अधिनियम था। अधिनियम की धारा 6 बिना वसीयत के मरने वाले सहदायिक के हितों के हस्तांतरण से संबंधित है। अधिनियम ने महिला की सीमित संपत्ति को पूर्ण स्वामित्व में परिवर्तित कर दिया। हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 ने धारा 6 में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं और इस संशोधन के आधार पर सहदायिक की पुत्री, सहदायिक के समान पुत्र बन गई है, जिसके सभी परिणामी प्रभाव हैं तथा उत्तरजीविता का नियम समाप्त कर दिया गया है। यह शोध पत्र भारत में हिंदू कानून के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के विकास और वर्तमान स्थिति की जांच करता है। इसमें वैधानिक प्रावधानों, विशेषकर हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 और उसके 2005 के संशोधन का आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है, जिससे बेटियों के उत्तराधिकार अधिकारों में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। अध्ययन में सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं और जागरूकता की कमी जैसी लगातार चुनौतियों पर प्रकाश डाला गया है जो प्रभावी कार्यान्वयन में बाधा डालती हैं। यह उन प्रमुख न्यायिक व्याख्याओं का भी मूल्यांकन करता है, जिन्होंने संपत्ति के स्वामित्व में लैंगिक समानता को मजबूत किया है। यह आलेख महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की व्यावहारिक प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए सुधारों का सुझाव देकर समाप्त होता है।

कीवर्ड: हिंदू महिलाएं, संपत्ति अधिकार, विरासत, महिलाओं के संपत्ति अधिकार, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956।

परिचय

महिलाओं का हर समाज में एक विशिष्ट स्थान है, चाहे वह विकसित हो, विकासशील हो या अविकसित हो। यह विशेष रूप से विभिन्न भूमिकाओं के कारण है। वे अपने जीवन के विभिन्न चरणों में बेटी, पत्नी, माँ और बहन आदि के रूप में खेलते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में उनके योगदान के बावजूद। मनुष्य होने के नाते वह अभी भी समाज के उस वर्ग या समूह से संबंधित है जो कई सामाजिक बाधाओं और रुकावटों के कारण वंचित स्थिति में है। वह समाज पर हावी पुरुषों के हाथों अत्याचार का शिकार रही हैं। भारतीय महिलाओं की स्थिति विश्व के अन्य भागों की महिलाओं की तुलना में बेहतर नहीं है। एक ओर, सभी लोग उनका बहुत सम्मान करते हैं: उनकी पूजा की जाती है, उन्हें सहिष्णुता और सद्गुण का प्रतीक माना जाता है। लेकिन दूसरी ओर, वह पुरुष प्रधान समाज द्वारा उत्पन्न और कायम रखे गए अनकहे दुखों, कठिनाइयों और अत्याचारों का शिकार रही है। उसे न केवल सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पूर्ण न्याय से वंचित किया गया है, बल्कि एक “कमजोर लिंग” के रूप में पुरुष प्रधान समाज द्वारा अधिकतम सीमा तक दुर्व्यवहार और शोषण किया गया है और सभी स्तरों पर अज्ञानता का शिकार बनाया गया है। एक वर्ग के रूप में महिलाओं की असुरक्षा का उनकी आर्थिक स्वतंत्रता से कोई लेना-देना नहीं है। महिला अपनी आर्थिक पृष्ठभूमि के बावजूद पीड़ित रही है। अमीर और गरीब समान रूप से विभिन्न प्रकार की सामाजिक बाधाओं और नुकसान के शिकार हैं। महिलाएं हर इंसान के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उसके बेहतर जन्म अधिकारों को सुरक्षित करने का मतलब हमारे अपने समाज, परिवार और प्रत्येक व्यक्ति को बेहतर भविष्य देना होगा। विभिन्न रूपों में लैंगिक असमानता है, लेकिन सबसे कठिन असमानता महिलाओं को दिए गए संपत्ति अधिकारों से संबंधित है। लिंग के आधार पर संपत्ति के अधिकारों में यह असमानता प्राचीन काल से ही मौजूद है। भारत में, एक तरफ एक महिला को दिव्य के रूप में देखा जाता है और सभी गुणों के अवतार के रूप में पूजा जाता है, लेकिन दूसरी तरफ पुरुष प्रधान समाज द्वारा बनाए गए मानदंडों के कारण उसके साथ भेदभाव किया जाता है और उसे प्रताड़ित किया जाता है। तमाम सभ्यता और सांस्कृतिक क्रांतियों के बाद भी उसे समाज में उसका उचित और वैध स्थान और दर्जा नहीं दिया गया है। देश के अधिकांश हिस्सों में घर और बाहर महिलाओं का शोषण जारी है। पुरुषों की श्रेष्ठता और महिलाओं के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ अभी भी व्यापक रूप से प्रचलित हैं। व्यक्तित्व का पूर्ण विकास, और राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिदृश्य में महिलाओं की मौलिक स्वतंत्रता और समान भागीदारी राष्ट्रीय विकास के सहवर्ती हैं जो सामाजिक और पारिवारिक स्थिरता पर निर्भर करते हैं। लिंग के आधार पर सभी प्रकार के भेदभाव अशांति को जन्म देते हैं। प्राचीन हिंदू समाज में, महिलाओं को निम्न सामाजिक स्थिति का माना जाता था और उनके साथ आश्रित के रूप में व्यवहार किया जाता था और उनके पास बमुश्किल संपत्ति का कोई अधिकार होता था।

पुराने मिताक्षरा कानून के तहत, जन्म के समय, पुत्र को पारिवारिक संपत्ति में अधिकार और हित प्राप्त होता है। इस के अनुसार, बेटा, पोता और परपोता परिवार में जन्म के आधार पर सहदायिकों का एक वर्ग बनाते हैं। मिताक्षरा कानून में कोई भी महिला सहदायिक सदस्य नहीं है। महिलाओं को उत्तराधिकार की योजना में लाने वाला सबसे पहला कानून ‘हिंदू उत्तराधिकार कानून अधिनियम, 1929’ था, जिसने तीन महिला उत्तराधिकारियों, यानी बेटे की बेटी, बेटी की बेटी और बहन को उत्तराधिकार के अधिकार प्रदान किए। इस अवधि के दौरान एक महिला को स्वामित्व का अधिकार प्रदान करने वाला एक और ऐतिहासिक कानून था ‘हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937’। 1937 के इस अधिनियम ने विधवा को बेटे के साथ सफल होने और बेटे के समान हिस्सा लेने में सक्षम बनाया। विधवा

सहदायिक नहीं थी, यद्यपि उसके पास संपत्ति में सहदायिक के हित के समान अधिकार था और वह संयुक्त परिवार की सदस्य थी।

हालाँकि, 'द हिंदू सक्सेशन एक्ट, 1956' के शुरू होने से पहले, एक हिंदू महिला द्वारा रखी गई संपत्ति को दो शीर्षकों के तहत वर्गीकृत किया गया था: (1) स्त्रीधन और (2) हिंदू महिलाओं की संपत्ति। पूर्व को उसकी पूर्ण संपत्ति माना जाता था जिस पर उसका पूर्ण स्वामित्व था और उसकी मृत्यु पर यह उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित हो गया। उत्तरार्द्ध को उसकी सीमित संपत्ति माना जाता था जिसके संबंध में उसकी अलगाव की शक्तियाँ सीमित थीं। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अधिनियमन ने सभी हिंदुओं को एक प्रकार की संयुक्त परिवार सहदायिक प्रणाली, यानी मिताक्षरा सहदायिकी के तहत प्राप्त कर लिया। यह कानून उत्तराधिकार का कानून बनाने के लिए बनाया गया था जिसके तहत बेटे और बेटियों को समान विरासत अधिकार प्राप्त होंगे। वास्तव में, हालाँकि, महत्वपूर्ण लैंगिक असमानताएं कायम रहीं जिससे बेटियों को काफी नुकसान हुआ। पूर्वाग्रह का मुख्य स्रोत संयुक्त परिवार की संपत्ति से आया, जिसमें बेटों को जन्म से ही स्वतंत्र हिस्सेदारी का अधिकार प्राप्त था, लेकिन बेटियों को ऐसा नहीं था। दोनों को उस अलग-अलग संपत्ति पर विरासत का समान अधिकार था जो उनके पिता ने अपने जीवनकाल में अर्जित की थी। बेटों को अपने पिता की सहदायिक संपत्ति में और बेटियों को अपने पिता की स्व-अर्जित संपत्ति में हिस्सा मिलता था। लेकिन इस तथ्य के कारण कि संपत्ति की एक बड़ी मात्रा, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, अभी भी संयुक्त स्वामित्व में है, ऐसे पक्षपातपूर्ण अधिकारों का भारत में महिलाओं की स्थिति पर गंभीर प्रभाव पड़ा।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अनुसार, बिना वसीयत के मरने वाले 'हिंदू' पुरुष की बेटियाँ, यानी बिना वसीयत छोड़े, बेटों के साथ समान उत्तराधिकारी थीं, लेकिन केवल उनके पिता की अलग संपत्ति और संयुक्त परिवार की संपत्ति के उनके 'काल्पनिक हिस्से' की, लेकिन संयुक्त परिवार की संपत्ति पर उनका कोई प्रत्यक्ष उत्तराधिकार अधिकार नहीं था। दूसरी ओर, बेटों को न केवल अपने पिता की अपनी संपत्ति का हिस्सा और संयुक्त परिवार की संपत्ति का 'काल्पनिक हिस्सा' विरासत में मिला, बल्कि संयुक्त परिवार की संपत्ति के स्वतंत्र हिस्से पर जन्म से ही सीधा अधिकार भी था। वास्तव में, जन्म से संयुक्त परिवार की संपत्ति में हिस्सेदारी हासिल करने वाले सभी व्यक्तियों को 'हिंदू सहदायिक' से संबंधित कहा जाता था, जो विरासत के मुद्दे के संबंध में वैचारिक रूप से एक विशेष पुरुष सदस्यता क्लब के समान है, जिस तक महिलाओं की कोई पहुंच नहीं थी।

महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्राचीन हिंदू कानून के तहत, महिलाओं के संपत्ति अधिकार सीमित थे और काफी हद तक उनकी वैवाहिक स्थिति पर निर्भर थे। स्त्रीधन (महिला की संपत्ति) की अवधारणा को मान्यता दी गई, लेकिन इसका दायरा संकीर्ण था और अक्सर परिवार के पुरुष सदस्यों द्वारा नियंत्रित किया जाता था। मनुस्मृति जैसे ग्रंथों में महिलाओं के लिए अधीनस्थ पद निर्धारित किया गया है, जिसमें कहा गया है कि महिला को हमेशा पुरुष रिश्तेदार के संरक्षण में रहना चाहिए।

हिंदू कानून के दो विभाग—मिताक्षरा और दयाभाग—विरासत को नियंत्रित करते थे:

मिताक्षरा: पारंपरिक हिंदू कानून के प्रमुख स्कूलों में से एक, मिताक्षरा ने बंगाल और असम को छोड़कर भारत के अधिकांश हिस्सों में संपत्ति अधिकार ढांचे को आकार देने में प्रमुख भूमिका निभाई। यज्ञवल्क्य स्मृति पर विज्ञानेश्वर की मिताक्षरा टिप्पणी के आधार पर, इस ने सहदायिकता की अवधारणा द्वारा शासित संयुक्त पारिवारिक संपत्ति की पितृसत्तात्मक प्रणाली की स्थापना की। इस प्रणाली के अंतर्गत, संपत्ति परिवार के पुरुष सदस्यों के पास संयुक्त रूप से

होती थी, तथा पैतृक संपत्ति पर अधिकार जन्म से ही प्राप्त होते थे। हालाँकि, यह जन्मसिद्ध अधिकार केवल पुरुष सहदायिकों—अर्थात् पुत्र, पौत्र और परपोते— तक ही सीमित था, जिससे संयुक्त परिवार संरचना में महिलाओं को स्वामित्व और उत्तराधिकार से व्यवस्थित रूप से बाहर रखा गया¹। मिताक्षरा प्रणाली के तहत महिलाओं को सहदायिक के रूप में मान्यता नहीं दी गई थी और इसलिए उन्हें विभाजन की मांग करने या पैतृक संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था। उनके मालिकाना अधिकार काफी हद तक स्ट्रिधान तक ही सीमित थे, जिसका दायरा सीमित था और अक्सर पुरुष नियंत्रण के अधीन था। यहां तक कि जब महिलाओं को संपत्ति विरासत में मिलती थी, जैसे कि विधवाएं अपने पति की संपत्ति की उत्तराधिकारी होती थीं, तब भी उन्हें केवल सीमित संपत्ति दी जाती थी, जिसमें पूर्ण स्वामित्व और अलगाव के अधिकार का अभाव होता था²। इस कानूनी ढांचे ने परिवार के भीतर महिलाओं की आर्थिक निर्भरता और हाशिए पर होने को मजबूत किया।

मिताक्षरा के तहत महिलाओं को सहदायिक अधिकारों से कठोर रूप से वंचित रखना लैंगिक असमानता का एक महत्वपूर्ण स्रोत बना रहा, जब तक कि वैधानिक सुधारों, विशेष रूप से हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 और इसके 2005 के संशोधन द्वारा इन भेदभावपूर्ण संरचनाओं को समाप्त करने का प्रयास नहीं किया गया³। इस प्रकार, जबकि मिताक्षरा प्रणाली ने पारंपरिक हिंदू संपत्ति कानून की रीढ़ बनाई, इसने गहराई से स्थापित पितृसत्तात्मक मानदंडों का भी उदाहरण दिया, जिन्हें आधुनिक कानूनी सुधारों ने ठीक करने का प्रयास किया है।

दयाभाग: हिंदू कानून का दयाभाग स्कूल, जो मुख्य रूप से बंगाल और असम में प्रचलित था, मिताक्षरा प्रणाली की तुलना में उत्तराधिकार और महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के प्रति तुलनात्मक रूप से अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करता था। यह स्कूल जिमूतावाहन द्वारा रचित ग्रंथ दयाभाग पर आधारित है, जिसमें जन्मसिद्ध अधिकार के बजाय धार्मिक प्रभावकारिता (आध्यात्मिक लाभ) के सिद्धांत के आधार पर उत्तराधिकार पर जोर दिया गया था। मिताक्षरा स्कूल के विपरीत, दयाभाग प्रणाली ने जन्म से सहदायिक संपत्ति की अवधारणा को मान्यता नहीं दी। इसके बजाय, संपत्ति का स्वामित्व उसके जीवनकाल के दौरान विशेष रूप से पिता के पास ही रहता था, तथा उत्तराधिकार केवल उसकी मृत्यु के बाद ही मिलता था⁴। इस संरचनात्मक अंतर का महिलाओं के अधिकारों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। चूंकि संयुक्त परिवार सहदायिकता की अवधारणा अनुपस्थित थी, इसलिए महिलाओं—विशेषकर विधवाओं—को उत्तराधिकार के अपेक्षाकृत बेहतर अधिकार प्रदान किये गये। एक विधवा अपने बेटों की अनुपस्थिति में और, कुछ मामलों में, अन्य उत्तराधिकारियों के साथ भी अपने पति की संपत्ति का उत्तराधिकारी बन सकती है⁵। हालाँकि, ये अधिकार पूर्ण नहीं थे; महिलाओं के पास आम तौर पर केवल सीमित संपत्ति होती थी, जिससे संपत्ति को अलग करने या निपटाने की उनकी शक्ति सीमित हो जाती थी। बेटियों को भी कुछ परिस्थितियों में उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी गई, हालांकि उनके अधिकार पुरुष उत्तराधिकारियों की तुलना में गौण रहे।

तुलनात्मक रूप से बेहतर उत्तराधिकार अधिकार प्रदान करने के बावजूद, दयाभाग स्कूल अभी भी पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर संचालित होता था, जो महिलाओं के संपत्ति पर पूर्ण स्वामित्व और नियंत्रण को सीमित करता था। महिलाओं को उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता देना मिताक्षरा कानून में देखे गए कठोर बहिष्कार से एक

¹ विज्ञानेश्वर मिताक्षरा, याज्ञवल्क्य स्मृति पर टिप्पणी।

² पारस दीवान, मॉडर्न हिंदू लॉ, 21वां संस्करण, इलाहाबाद लॉ एजेंसी।

³ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956; हिंदू उत्तराधिकार, संशोधन अधिनियम, 2005।

⁴ जीमूतावाहन, दयाभाग।

⁵ मुल्ला, हिंदू कानून के सिद्धांत, 22वां संस्करण।

प्रगतिशील विचलन था, फिर भी यह वास्तविक समानता सुनिश्चित करने में विफल रहा। इन सीमाओं के कारण अंततः विधायी सुधारों की आवश्यकता पड़ी, जैसे कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956, जिसका उद्देश्य भारत के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के संपत्ति अधिकारों को मानकीकृत और विस्तारित करना था⁶।

महिलाएं जो संपत्ति हिस्सा पाने की हकदार हैं

मिताक्षरा स्कूल के अंतर्गत कुछ महिलाएं ऐसी हैं जो विभाजन पर हिस्सा पाने की हकदार हैं, लेकिन उनका हिस्सा फिर से सीमित संपत्ति के रूप में था, अर्थात् उनके जीवनकाल के दौरान। इन महिलाओं की मृत्यु के बाद संपत्ति अंतिम पुरुष मालिकों के पास वापस आ जाती है। ये महिलाएं जो हिस्सा पाने की हकदार हैं वे हैं:

1. बेटियां सहदायिक के रूप में

हिंदू कानून में सबसे परिवर्तनकारी परिवर्तनों में से एक बेटियों को सहदायिक के रूप में मान्यता देना है। 2005 के संशोधन से पहले, बेटियों को सहदायिक का हिस्सा नहीं माना जाता था और इसलिए पैतृक संपत्ति में उनका कोई जन्मसिद्ध अधिकार नहीं था। हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 ने बेटियों को सहदायिक संपत्ति में बेटों के समान अधिकार और दायित्व प्रदान करने के लिए धारा 6 में संशोधन किया। परिणामस्वरूप, बेटियों को अब जन्म से अधिकार प्राप्त हो गए हैं, जिनमें विभाजन की मांग करने, अपने हिस्से का निपटान करने और कुछ परिस्थितियों में संयुक्त परिवार के कर्ता (प्रबंधक) के रूप में कार्य करने का अधिकार शामिल है⁷।

विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा मामले में सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि बेटों का सहदायिक अधिकार जन्म से है और यह इस बात पर निर्भर नहीं करता है कि संशोधन की तारीख पर पिता जीवित था या नहीं। इस फैसले ने परस्पर विरोधी व्याख्याओं का निपटारा किया और कानून का एक समान अनुप्रयोग सुनिश्चित किया⁸। इस प्रकार, आज बेटियां पैतृक संपत्ति के मामले में बेटों के बराबर खड़ी हैं।

2. विधवाओं का विरासत का अधिकार

हिंदू कानून के तहत विधवाओं को लंबे समय से महत्वपूर्ण उत्तराधिकारी माना जाता रहा है, हालांकि समय के साथ उनके अधिकारों में काफी विकास हुआ है। पारंपरिक कानून के तहत, विधवाएं अपने पति की संपत्ति में केवल सीमित संपत्ति की हकदार थीं। हालांकि, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 ने सीमित संपत्ति की अवधारणा को समाप्त कर दिया और महिलाओं को पूर्ण स्वामित्व प्रदान किया⁹।

अधिनियम के तहत विधवा को वर्ग I उत्तराधिकारी के रूप में वर्गीकृत किया गया है और वह मृतक के बेटे, बेटियों और मां के साथ समान हिस्सेदारी की हकदार है। जहां एक से अधिक विधवाएं हों (बहुविवाह के निषेध से पहले के मामलों में), वे सामूहिक रूप से विधवा श्रेणी को आवंटित हिस्से को साझा करती हैं। यह प्रावधान विधवाओं के लिए वित्तीय सुरक्षा और स्वतंत्रता सुनिश्चित करता है, जो ऐतिहासिक रूप से समाज के सबसे कमजोर सदस्यों में से थीं।

⁶ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956.

⁷ हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005, धारा 6.

⁸ विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा, (2020) 9 एससीसी 11।

⁹ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956, धारा 14.

3. माताएँ वारिस के रूप में

माता को प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारी के रूप में शामिल करना वैधानिक ढांचे की एक अन्य प्रगतिशील विशेषता का प्रतिनिधित्व करता है। एक माँ को अपने मृत बेटे की संपत्ति में अन्य वर्ग I उत्तराधिकारियों के साथ समान हिस्सेदारी का अधिकार है¹⁰। यह मान्यता पहले के मानदंडों से विचलन को दर्शाती है जहां मातृ दावों को अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता था या पुरुष रिश्तेदारों के दावों के अधीन कर दिया जाता था। माँ का अधिकार पूर्ण और स्वतंत्र है, उसकी वैवाहिक स्थिति या वित्तीय स्थिति पर निर्भर नहीं है। न्यायालयों ने लगातार इस अधिकार को बरकरार रखा है तथा इस बात पर बल दिया है कि विधायी उद्देश्य लिंग भेद के बिना सभी निकटतम परिवार के सदस्यों को समान सुरक्षा प्रदान करना है।

4. अन्य महिला उत्तराधिकारी

बेटियों, विधवाओं और माताओं के अलावा, कई अन्य महिला रिश्तेदारों को हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के तहत उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी गई है। इनमें शामिल हैं:

- बेटे की विधवा (बहू)
- पूर्व मृत पुत्र की पुत्री
- किसी पूर्व मृत बेटे की बेटे
- पूर्व मृत पुत्र के पूर्व मृत पुत्र की विधवा

ये उत्तराधिकारी वर्ग 1 श्रेणी में शामिल हैं और अन्य वर्ग I उत्तराधिकारियों के साथ-साथ उत्तराधिकार पाने के हकदार हैं¹¹। उनके समावेश से यह सुनिश्चित होता है कि आने वाली पीढ़ियों में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की जाती है, खासकर उन मामलों में जहां प्राथमिक पुरुष उत्तराधिकारी अब जीवित नहीं है।

5. स्व-अर्जित और पैतृक संपत्ति में अधिकार

महिला उत्तराधिकारियों को स्व-अर्जित और पैतृक संपत्ति दोनों में हिस्सेदारी का अधिकार है, हालांकि उनके अधिकारों की प्रकृति भिन्न है। स्व-अर्जित संपत्ति में उत्तराधिकार स्वामी की मृत्यु के बाद होता है, तथा सभी वर्ग I उत्तराधिकारी—महिला उत्तराधिकारियों सहित—समान रूप से उत्तराधिकार प्राप्त करते हैं। पैतृक संपत्ति में, बेटियों को अब जन्म से ही सहदायिक अधिकार प्राप्त हैं, जैसा कि पहले चर्चा की गई थी। यह दोहरी पात्रता संपत्ति के विभिन्न स्रोतों तक पहुंच प्रदान करके महिलाओं की आर्थिक स्थिति को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाती है। हालांकि, इन अधिकारों का प्रयोग अक्सर जागरूकता, दस्तावेज़ीकरण और दावे करने की इच्छा पर निर्भर करता है।

6. वसीयतनामा अधिकार और सीमाएँ

यद्यपि अधिनियम में बिना वसीयत के उत्तराधिकार का प्रावधान है, लेकिन यह वसीयत के माध्यम से अपनी संपत्ति का निपटान करने के व्यक्तियों के अधिकार को भी मान्यता देता है। ऐसे मामलों में, यदि संपत्ति का मालिक चाहे तो महिला उत्तराधिकारियों को बाहर रखा जा सकता है। हालांकि, अदालतों ने वसीयत की जांच की है ताकि यह

¹⁰ उपरोक्त, अनुसूची (कक्षा I के उत्तराधिकारी)।

¹¹ मुल्ला, हिंदू कानून के सिद्धांत, 22वां संस्करण।

सुनिश्चित किया जा सके कि वे जबरदस्ती, धोखाधड़ी या अनुचित प्रभाव का परिणाम नहीं हैं, खासकर तब जब वे महिला उत्तराधिकारियों को असंगत रूप से नुकसान पहुंचाते हों।

स्त्रीधन की अवधारणा

हिंदू कानून के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के ऐतिहासिक विकास में स्त्रीधन की अवधारणा एक केंद्रीय स्थान रखती है। संस्कृत शब्दों “स्त्री” (महिला) और “धन” (संपत्ति) से व्युत्पन्न, स्त्रीधन उस संपत्ति को संदर्भित करता है जो एक महिला अपने पुरुष रिश्तेदारों से स्वतंत्र रूप से रखती है। शास्त्रीय हिंदू न्यायविदों ने स्त्रीधन को एक महिला की पूर्ण संपत्ति के रूप में मान्यता दी, जिस पर उसका पूर्ण नियंत्रण था, जिसमें अपनी इच्छा से इसका उपयोग करने, आनंद लेने और निपटान करने का अधिकार भी शामिल था। मनुस्मृति और याज्ञवल्क्य स्मृति जैसे प्राचीन कानूनी ग्रंथों में स्त्रीधन के विभिन्न रूपों का उल्लेख है, जिनमें माता-पिता, रिश्तेदारों और ससुराल वालों से विवाह से पहले, विवाह के दौरान और विवाह के बाद प्राप्त उपहार भी शामिल हैं¹²।

पारंपरिक कानून के तहत, स्त्रीधन में चल संपत्ति जैसे आभूषण, आभूषण, धन और कभी-कभी अचल संपत्ति भी शामिल होती थी जो विशेष रूप से महिला को उपहार में दी जाती थी। महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंदू समाज के पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर भी, स्त्रीधन को महिला की विशेष संपत्ति माना जाता था, और न तो उसके पति और न ही उसके परिवार का इस पर कोई कानूनी दावा था। हालाँकि, व्यवहार में, सामाजिक रीति-रिवाजों और पारिवारिक दबाव के कारण स्त्रीधन पर महिलाओं का नियंत्रण अक्सर सीमित था¹³।

आधुनिक वैधानिक कानून के तहत स्त्रीधन की कानूनी स्थिति को मजबूत किया गया है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 इस सिद्धांत को पुष्टि करती है कि किसी हिंदू महिला के पास मौजूद कोई भी संपत्ति, चाहे वह अधिनियम¹⁴ के लागू होने से पहले या बाद में अर्जित की गई हो, उसके पास पूर्ण स्वामी के रूप में होगी, न कि सीमित स्वामी के रूप में। न्यायिक निर्णयों ने आगे पुष्टि की है कि स्त्रीधन एक महिला की पूर्ण संपत्ति बनी हुई है और वैवाहिक विवादों के मामलों में भी, मांग पर उसे वापस किया जाना चाहिए। इस प्रकार, जबकि स्त्रीधन की अवधारणा प्राचीन हिंदू कानून में उत्पन्न हुई थी, यह समकालीन कानूनी विमर्श में महिलाओं के स्वतंत्र संपत्ति अधिकारों को मान्यता देने के लिए एक महत्वपूर्ण आधार के रूप में काम करना जारी रखती है।

हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937

हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 ने हिंदू कानून के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ को चिह्नित किया। औपनिवेशिक काल के दौरान अधिनियमित इस अधिनियम का उद्देश्य पारंपरिक हिंदू कानून की कठोरता को कम करना था, विशेष रूप से मिताक्षरा प्रणाली के तहत, जिसमें महिलाओं को उत्तराधिकार से बड़े पैमाने पर वंचित रखा गया था। इस कानून से पहले, विधवाओं को अपने पति की संपत्ति पर सीमित भरण-पोषण को छोड़कर कोई महत्वपूर्ण अधिकार नहीं था। १९३७ के अधिनियम ने विधवाओं को संयुक्त परिवार की संपत्ति सहित अपने मृत पति की संपत्ति में हिस्सा पाने का अधिकार देकर एक महत्वपूर्ण सुधार पेश किया¹⁵। अधिनियम के तहत, संपत्ति में हिस्सेदारी के मामले में विधवा को पुत्र के समान दर्जा दिया गया। हालाँकि, यह अधिकार

¹² मनुस्मृति; याज्ञवल्क्य स्मृति.

¹³ पारस दीवान, मॉडर्न हिंदू लॉ, 21वां संस्करण।

¹⁴ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956, धारा 14.

¹⁵ हिंदू महिलाओं का संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937।

पूर्ण नहीं था, क्योंकि उसे केवल एक सीमित संपत्ति (जिसे हिंदू महिला की संपत्ति के रूप में जाना जाता है) दी गई थी। इसका अर्थ यह था कि यद्यपि वह संपत्ति से आय का आनंद ले सकती थी, लेकिन उसके पास पूर्ण स्वामित्व नहीं था और कानूनी आवश्यकता को छोड़कर उसे संपत्ति से अलग करने या हस्तांतरित करने पर प्रतिबंध था¹⁶। इन सीमाओं के बावजूद, यह अधिनियम अपने समय के लिए प्रगतिशील था, क्योंकि इसने विधवा को कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी और उसे पारिवारिक संरचना के भीतर कुछ हद तक आर्थिक सुरक्षा प्रदान की।

इस अधिनियम का मिताक्षरा सहदायिकता के अंतर्गत उत्तरजीविता की अवधारणा पर भी प्रभाव पड़ा, क्योंकि इसने विधवा को अपने मृत पति के स्थान पर कदम रखने की अनुमति दे दी, जिससे कठोर पुरुष-केंद्रित ढांचा कमजोर हो गया। हालाँकि, इसका दायरा मुख्य रूप से विधवाओं तक ही सीमित था और बेटियों या अन्य महिला सदस्यों को समान अधिकार नहीं दिए गए थे।

1937 के अधिनियम का महत्व बाद के व्यापक सुधारों, विशेष रूप से हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अग्रदूत के रूप में इसकी भूमिका में निहित है, जिसने सीमित संपत्ति को समाप्त कर दिया और महिलाओं को पूर्ण स्वामित्व अधिकार प्रदान किए¹⁷। इस प्रकार, यद्यपि 1937 के अधिनियम से पूर्ण लैंगिक समानता प्राप्त नहीं हुई, फिर भी इसने आधुनिक हिंदू कानून में महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की प्रगतिशील मान्यता की नींव रखी।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकार

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 हिंदू व्यक्तिगत कानून को संहिताबद्ध और आधुनिक बनाने में एक ऐतिहासिक सुधार का प्रतिनिधित्व करता है, खासकर महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के संबंध में। इसका सबसे महत्वपूर्ण योगदान महिलाओं को स्वतंत्र कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता देना था, जिससे वे पारंपरिक पितृसत्तात्मक ढांचे से अलग हो गईं, जो उन्हें उत्तराधिकार से काफी हद तक बाहर रखता था। अधिनियम ने बेटियों, विधवाओं और माताओं जैसी महिला उत्तराधिकारियों को प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारियों में रखा, जिससे उन्हें बिना वसीयत के हिंदू पुरुष की मृत्यु पर पुरुष उत्तराधिकारियों के साथ-साथ और समान रूप से संपत्ति विरासत में पाने का अधिकार मिला¹⁸।

अधिनियम के तहत एक प्रमुख प्रगतिशील प्रावधान धारा 14 है, जिसने “सीमित संपत्ति की अवधारणा को समाप्त कर दिया और महिलाओं को उनके पास मौजूद संपत्ति पर पूर्ण स्वामित्व प्रदान किया। इस प्रावधान ने यह सुनिश्चित किया कि किसी हिंदू महिला द्वारा अर्जित कोई भी संपत्ति —चाहे विरासत, उपहार, रखरखाव या अन्यथा— उसके पास अलगाव की पूर्ण शक्तियों के साथ पूर्ण मालिक के रूप में होगी¹⁹। यह पारंपरिक हिंदू कानून से एक निर्णायक बदलाव था, जहां महिलाओं के स्वामित्व अधिकारों पर गंभीर प्रतिबंध थे।

हालाँकि, अधिनियम ने लैंगिक असमानता के कुछ तत्वों को बरकरार रखा। उल्लेखनीय रूप से, इसने मिताक्षरा प्रणाली के तहत बेटियों को पैतृक संपत्ति में सहदायिक अधिकार नहीं दिया, जिससे वे संयुक्त परिवार की संपत्ति में जन्म-आधारित स्वामित्व अधिकारों से वंचित हो गईं²⁰। इस सीमा का अर्थ यह था कि यद्यपि बेटियां किसी पुरुष

¹⁶ मुल्ला, हिंदू कानून के सिद्धांत, 22वां संस्करण।

¹⁷ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956.

¹⁸ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956, अनुसूची (श्रेणी I उत्तराधिकारी)।

¹⁹ पूर्वोक्त, धारा 14.

²⁰ उपरोक्त, धारा 6 (2005 संशोधन से पहले)।

रिश्तेदार की मृत्यु के बाद संपत्ति की उत्तराधिकारी हो सकती थीं, लेकिन उनके जीवनकाल में उन्हें संयुक्त परिवार में समान दर्जा प्राप्त नहीं था।

अधिनियम ने महिलाओं को स्व-अर्जित और पृथक संपत्ति दोनों में अधिकार प्रदान किए, जिससे यह सुनिश्चित हुआ कि महिला उत्तराधिकारी मृतक हिंदू द्वारा बिना वसीयत के छोड़ी गई संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा कर सकेंगी²¹। इसके अलावा, महिला हिंदुओं के बीच उत्तराधिकार से संबंधित प्रावधानों (धारा 15 और 16) में महिलाओं के स्वामित्व वाली संपत्ति के हस्तांतरण के लिए एक विशिष्ट योजना निर्धारित की गई है, हालांकि कुछ परिस्थितियों में पति के उत्तराधिकारियों को प्राथमिकता देने के लिए इस योजना की आलोचना की गई है²²। कुल मिलाकर, जबकि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 ने उत्तराधिकार और स्वामित्व प्रदान करके महिलाओं के संपत्ति अधिकारों को महत्वपूर्ण रूप से आगे बढ़ाया, यह पूर्ण लैंगिक समानता प्राप्त करने में विफल रहा, एक अंतर जिसे बाद में 2005 के संशोधन द्वारा संबोधित किया गया²³।

हिंदू उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम 2005

हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, २००५ हिंदू कानून के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की उन्नति में एक महत्वपूर्ण क्षण का प्रतिनिधित्व करता है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में अंतर्निहित लिंग आधारित असमानताओं को दूर करने के लिए अधिनियमित इस संशोधन ने मिताक्षरा सहदायिक प्रणाली को मौलिक रूप से बदल दिया, जिसके तहत बेटियों को जन्म से ही बेटों के बराबर सहदायिक का दर्जा प्रदान किया गया²⁴। इस सुधार ने यह सुनिश्चित किया कि बेटियों को पैतृक संपत्ति में समान अधिकार और दायित्व प्राप्त होंगे, जिसमें विभाजन की मांग करने, अपने हिस्से का निपटान करने और उचित मामलों में संयुक्त परिवार की संपत्ति के कर्ता (प्रबंधक) के रूप में कार्य करने का अधिकार भी शामिल है।

संशोधन का एक प्रमुख उद्देश्य व्यक्तिगत कानूनों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 के तहत समानता की संवैधानिक गारंटी के साथ संरेखित करना था। सहदायिक अधिकारों से बेटियों के भेदभावपूर्ण बहिष्कार को समाप्त करके, कानून ने महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक स्थिति को बढ़ाने का प्रयास किया। संशोधन ने सहदायिक संपत्ति के संबंध में उत्तरजीविता के सिद्धांत को भी समाप्त कर दिया, जिससे यह सुनिश्चित हो गया कि संपत्ति वसीयतनामा या बिना वसीयत के उत्तराधिकार के माध्यम से हस्तांतरित होगी, जिससे महिला उत्तराधिकारियों को लाभ होगा।

संशोधन के दायरे को स्पष्ट करने में न्यायिक व्याख्या ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि सहदायिक के रूप में बेटे का अधिकार जन्म से होता है और यह इस बात पर निर्भर नहीं करता कि संशोधन के समय पिता जीवित था या नहीं²⁵। इस निर्णय ने पहले के परस्पर विरोधी निर्णयों को हल कर दिया तथा जन्म के आधार पर अधिकारों के संदर्भ में प्रावधान के पूर्वव्यापी अनुप्रयोग को सुदृढ़ किया।

²¹ पारस दीवान, मॉडर्न हिंदू लॉ, 21वां संस्करण।

²² हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956, धारा 15-16।

²³ हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005.

²⁴ हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005, धारा 6.

²⁵ विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा, (2020) 9 एससीसी 11।

इसकी प्रगतिशील प्रकृति के बावजूद, संशोधन के प्रभावी कार्यान्वयन में चुनौतियाँ बनी हुई हैं, विशेष रूप से सामाजिक प्रतिरोध, जागरूकता की कमी और प्रक्रियात्मक बाधाओं के कारण। फिर भी, 2005 का संशोधन हिंदू कानून के तहत संपत्ति के अधिकारों में वास्तविक लैंगिक समानता हासिल करने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है।

महिलाओं के संपत्ति अधिकारों में सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाएँ

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 और हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 जैसे प्रगतिशील कानूनी सुधारों के बावजूद, भारत में महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की प्रभावी प्राप्ति में सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं के कारण काफी बाधा बनी हुई है। ये बाधाएँ कई स्तरों—परिवार, समुदाय और संस्थागत—पर काम करती हैं और अक्सर लैंगिक समानता प्राप्त करने के उद्देश्य से कानूनी प्रावधानों के इरादे को कमजोर करती हैं।

सबसे व्यापक बाधाओं में से एक भारतीय समाज की गहरी जड़ें जमा चुकी पितृसत्तात्मक संरचना है, जो पारंपरिक रूप से संपत्ति के स्वामित्व को पुरुषों का विशेषाधिकार मानती है। सांस्कृतिक मानदंड इस बात पर जोर देते हैं कि बेटियाँ, शादी के बाद, अपने पति के परिवार का हिस्सा बन जाती हैं और इसलिए उन्हें अपनी जन्मजात संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा नहीं करना चाहिए। यह विश्वास महिलाओं को अपने कानूनी अधिकारों का दावा करने से हतोत्साहित करता है, भले ही ऐसे अधिकारों को कानून द्वारा स्पष्ट रूप से मान्यता प्राप्त हो²⁶। परिणामस्वरूप, कई महिलाएं पारिवारिक सद्भाव और सामाजिक स्वीकृति बनाए रखने के लिए स्वेच्छा से अपने भाइयों के पक्ष में अपनी विरासत छोड़ देती हैं।

एक अन्य महत्वपूर्ण बाधा महिलाओं में जागरूकता और कानूनी साक्षरता की कमी है, खासकर ग्रामीण और आर्थिक रूप से वंचित क्षेत्रों में। बड़ी संख्या में महिलाएं आधुनिक कानूनों के तहत अपने अधिकारों से अनभिज्ञ हैं, जिनमें 2005 के संशोधन के बाद सहदायिक के रूप में उनकी स्थिति भी शामिल है²⁷। यह अज्ञानता अक्सर कानूनी संसाधनों और सहायता तक सीमित पहुंच के कारण और भी बढ़ जाती है, जिससे महिलाओं के लिए संपत्ति पर दावा शुरू करना या उसे बनाए रखना मुश्किल हो जाता है।

सामाजिक दबाव और भावनात्मक विचार भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। महिलाओं को अक्सर व्यक्तिगत अधिकारों की अपेक्षा पारिवारिक रिश्तों को प्राथमिकता देने के लिए तैयार किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप वे भेदभावपूर्ण प्रथाओं को चुपचाप स्वीकार कर लेती हैं। कई मामलों में, संपत्ति के अधिकार का दावा करना अवज्ञा या लालच का कार्य माना जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक बहिष्कार या पारिवारिक संबंधों में तनाव हो सकता है²⁸। इस तरह के दबाव महिलाओं को कानूनी उपाय तलाशने से रोकते हैं, यहां तक कि उन स्थितियों में भी जहां वे आर्थिक रूप से कमजोर हैं।

इसके अतिरिक्त, प्रथागत प्रथाएं और अनौपचारिक मानदंड अक्सर वैधानिक प्रावधानों पर हावी हो जाते हैं, खासकर ग्रामीण समुदायों में। पारंपरिक विवाद समाधान तंत्र, जैसे कि ग्राम पंचायतें, पुरुष उत्तराधिकारियों को लाभ पहुंचा सकती हैं तथा लिंग-पक्षपाती परिणामों को मजबूत कर सकती हैं। औपचारिक कानून और प्रथागत व्यवहार के बीच यह अंतर, सामाजिक परिवर्तन के अभाव में कानूनी सुधार की सीमाओं को उजागर करता है।

²⁶ हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956.

²⁷ हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005.

²⁸ फ्लाविया एग्रेस, भारत में कानून और लैंगिक असमानता।

आर्थिक निर्भरता समस्या को और बढ़ा देती है। जिन महिलाओं के पास आय के स्वतंत्र स्रोतों का अभाव होता है, उनके घर में पुरुष सत्ता को चुनौती देने की संभावना कम होती है। जैसा कि बीना अग्रवाल ने उल्लेख किया है, संपत्ति का स्वामित्व महिलाओं की सौदेबाजी की शक्ति और समग्र सशक्तिकरण से निकटता से जुड़ा हुआ है²⁹। आर्थिक सुरक्षा के बिना, महिलाएं अक्सर अपने अधिकारों का प्रभावी ढंग से दावा करने में असमर्थ होती हैं।

अंततः, जटिल कानूनी प्रक्रियाओं, अदालतों में देरी और लिंग-संवेदनशील कार्यान्वयन की कमी सहित प्रशासनिक और प्रक्रियात्मक बाधाएं अतिरिक्त बाधाएं पैदा करती हैं। यहां तक कि जब महिलाएं अपने दावों को आगे बढ़ाने का विकल्प चुनती हैं, तब भी ये संस्थागत चुनौतियां उन्हें कानूनी कार्यवाही जारी रखने से हतोत्साहित कर सकती हैं।

निष्कर्षतः, जबकि विधायी सुधारों ने संपत्ति अधिकारों में लैंगिक समानता के लिए एक मजबूत नींव रखी है, सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाएं उनके प्रभावी कार्यान्वयन में बाधा बनी हुई हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए न केवल कानूनी उपायों की आवश्यकता है, बल्कि सामाजिक जागरूकता, शिक्षा और सशक्तिकरण की दिशा में निरंतर प्रयासों की भी आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि महिलाएं व्यवहार में अपने अधिकारों का पूरी तरह से उपयोग कर सकें।

निष्कर्ष

भारतीय बहुत धार्मिक विचारधारा वाले लोग हैं और संपत्ति के वितरण में धर्म बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। महिलाओं को समाज के एक सम्मानित हिस्से के रूप में चित्रित करने वाले धार्मिक नारों को रेडियो, समाचार पत्रों, टेलीविजन के माध्यम से सार्वजनिक रूप से प्रचारित किया जाना चाहिए, स्कूलों, कॉलेजों, अन्य सरकारी संस्थानों आदि में उन्हें उजागर किया जाना चाहिए। क्षेत्रीय भाषा में छोटी वृत्तचित्र फिल्में बनाई जानी चाहिए और इसे गांवों, शहरों, कस्बों आदि में दिखाया जाना चाहिए आदि कानूनों के कार्यान्वयन के लिए सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि महिलाओं को अपने अधिकारों के लिए आगे आना होगा। उन्हें अपने अधिकारों के लिए नहीं सोना चाहिए। वे पारिवारिक संपत्ति में अपने हिस्से की वसूली के लिए अदालत के दरवाजे खटखटा सकते हैं। उत्तराधिकार कानून में 2005 का नया संशोधन हिंदू महिलाओं की स्वामित्व स्थिति में सुधार लाने की दिशा में एक उत्साहजनक कदम है। अब नए हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के प्रावधान को लागू करने की बारी कार्यपालिका और न्यायपालिका की है। विधायी प्रयासों के बाद न्यायालयों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो गई है और यह आशा की जाती है कि न्यायालय समाज के हित में महिलाओं को संपत्ति के अधिकार प्रदान करने वाले कानूनों की व्यापक से व्यापक व्याख्या करेंगे।

हिंदू कानून के तहत महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के अध्ययन से बहिष्कार से लेकर क्रमिक समावेशन और अंततः औपचारिक समानता की ओर एक स्पष्ट प्रक्षेपवक्र का पता चलता है। मिताक्षरा जैसी पारंपरिक प्रणालियों के प्रतिबंधात्मक मानदंडों से, जहां महिलाओं को सहदायिक अधिकारों से वंचित किया जाता था, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 द्वारा शुरू किए गए प्रगतिशील सुधारों और 2005 में इसके परिवर्तनकारी संशोधन तक, कानूनी ढांचे में पर्याप्त विकास हुआ है। बेटियों को सहदायिक के रूप में मान्यता देना तथा सीमित संपत्ति का उन्मूलन, संपत्ति अधिकारों के क्षेत्र में लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण मील के पत्थर हैं।

²⁹ बीना अग्रवाल ए फील्ड ऑफ वन्स ओनरू जेंडर एंड लैंड राइट्स इन साउथ एशिया।

हालाँकि, सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं का बने रहना, जागरूकता की कमी और कार्यान्वयन चुनौतियाँ इन अधिकारों की व्यावहारिक प्राप्ति को सीमित कर रही हैं। अकेले कानूनी प्रावधान समानता सुनिश्चित नहीं कर सकते जब तक कि सामाजिक दृष्टिकोण और प्रभावी प्रवर्तन तंत्र में बदलाव न हो। पारिवारिक दबाव और आर्थिक निर्भरता के कारण अपने अधिकारों का दावा करने में महिलाओं की अनिच्छा कानून और वास्तविकता के बीच अंतर को उजागर करती है।

निष्कर्षतः, यद्यपि आज हिंदू कानून महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के लिए एक मजबूत कानूनी आधार प्रदान करता है, फिर भी वास्तविक समानता का लक्ष्य अभी भी आंशिक रूप से ही प्राप्त हुआ है। एक व्यापक दृष्टिकोण — कानूनी सुधार, सामाजिक जागरूकता और संस्थागत समर्थन का संयोजन— यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि महिलाओं को न केवल कागजों पर अधिकार प्राप्त हों, बल्कि उन्हें व्यवहार में भी उनका पूर्ण प्रयोग करने का अधिकार मिले।

ग्रंथ सूची

- भारत का संविधान, 1950।
- दहेज निषेध अधिनियम, 1961।
- हिंदू संहिता विधेयक, 1954।
- हिंदू उत्तराधिकार (विकलांगता निवारण) अधिनियम, 1928।
- हिंदू उत्तराधिकार कानून (संशोधन) अधिनियम 1929 (1929 का अधिनियम II)।
- हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005।
- हिंदू उत्तराधिकार (आंध्र प्रदेश संशोधन) अधिनियम, 1986।
- हिंदू उत्तराधिकार (कर्नाटक संशोधन) अधिनियम, 1994।
- हिंदू उत्तराधिकार (महाराष्ट्र संशोधन) अधिनियम, 1994।
- हिंदू उत्तराधिकार (तमिलनाडु संशोधन) अधिनियम, 1989।
- हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 (1956 का अधिनियम संख्या XXX)।
- हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937।
- हिंदू वसीयत अधिनियम, 1870।
- भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1865, (1865 का अधिनियम X)।
- भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925।
- भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925।
- केरल संयुक्त हिंदू परिवार प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1975।
- विवाहित महिला संपत्ति अधिनियम, 1874।